REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 16 | ISSUE - 2 | NOVEMBER - 2026

गीतांजलि श्री के कथा-साहित्य में स्त्री विमर्श

श्री. शिवराज माणिकराव मिटकरी
शोधार्थी
श्री. डॉ. अनिल एम. साळुंखे
शोध निर्देशक
पुण्यश्लोक अहिल्यादेवी होलकर सोलापुर विश्वविद्यालय, सोलापुर.

शोध सारांश:



प्रस्तुत शोध पत्र में बुकर पुरस्कार से सम्मानित प्रख्यात लेखिका गीतांजलि श्री के साहित्य (विशेषकर 'रेत समाधि', 'माई' और 'हमारा शहर उस बरस') के आलोक में स्त्री-विमर्श, नारी-संघर्ष तथा समाज व्यवस्था में उनकी बदलती भूमिका का गहन मूल्यांकन किया गया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि लेखिका ने पारंपरिक पितृसत्तात्मक संरचनाओं और सामाजिक वर्जनाओं को चुनौती देते हुए स्त्री की स्वतंत्रता को केवल सामाजिक-आर्थिक दायरे तक सीमित नहीं माना, बल्कि उसमें मानसिक, भावनात्मक और यौनिक स्वायत्तता को भी रेखांकित किया है। उपन्यासों के वृद्ध व अन्य स्त्री पात्रों के माध्यम से आत्मबोध, निर्णय लेने की क्षमता, वृद्धावस्था में इच्छाओं के पुनरुत्थान तथा परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व को अत्यंत संवेदनशीलता से उभारा गया है।

निष्कर्षतः, गीतांजलि श्री का लेखन नारीवादी चेतना को सशक्त करते हुए साहित्य में स्त्री-अस्मिता और व्यापक सामाजिक परिवर्तन की एक युगांतकारी गूंज प्रस्तुत करता है।

मुख्य बिं दु: गीतांजलि श्री, स्त्री विमर्श, रेत समाधि, पितृसत्ता, आत्मबोध, नारी चेतना, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना

१. स्त्री विमर्श परिचय

स्त्री विमर्श साहित्य, समाज और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण विषय है, जो महिलाओं के अधिकार, उनकी पहचान, संघर्ष और स्वतंत्रता के प्रश्नों को संबोधित करता है। भारतीय साहित्य में स्त्री विमर्श की जड़ें बहुत गहरी हैं, और यह सदियों से सामाजिक संरचना, परंपराओं और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ एक सशक्त आवाज के रूप में उभरता रहा है।

समाज में स्त्रियों की स्थिति को लेकर अनेक लेखकों और विचारकों ने अपने विचार प्रकट किए हैं, लेकिन साहित्य में स्त्रियों की आत्मनिर्भरता, उनके संघर्ष, समाज में उनकी भूमिका और पहचान को उजागर करने का कार्य विशेष रूप से महिला लेखिकाओं ने किया है। गीतांजलि श्री का साहित्य इसी परंपरा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

गीतांजलि श्री एक ऐसी लेखिका हैं, जिन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से स्त्री के अस्तित्व, उसकी स्वायत्तता, उसकी इच्छाओं और उसके मनोवैज्ञानिक द्वंद्व को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी कृतियाँ विशेष रूप से स्त्री के आंतरिक और बाह्य संघर्ष को उभारती हैं। उनका साहित्य न केवल पितृसत्तात्मक व्यवस्था की आलोचना करता है, बल्कि स्त्री के आत्मबोध और स्वतंत्रता की दिशा में एक महत्वपूर्ण विमर्श प्रस्तुत करता है।

२. गीतांजलि श्री का साहित्य और स्त्री विमर्श

गीतांजलि श्री के साहित्य में स्त्री विमर्श एक केंद्रीय विषय के रूप में उपस्थित होता है। उनकी रचनाएँ न केवल सामाजिक यथार्थ को दर्शाती हैं, बल्कि स्त्री की संवेदनाओं, उसकी इच्छाओं और समाज में उसकी स्थिति को भी उजागर करती हैं।

उनके उपन्यास *'रेत समाधि'* में एक वृद्धा की स्वतंत्रता की खोज, उसकी इच्छाएँ और समाज से टकराव प्रमुख रूप से उभरकर आते हैं। इस उपन्यास की मुख्य पात्र एक वृद्ध महिला है, जो विधवा होने के बाद अपनी पहचान और स्वतंत्रता की तलाश में निकलती है। यह केवल एक स्त्री की यात्रा नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर एक गहरे विमर्श की शुरुआत है।

स्त्री विमर्श के संदर्भ में गीतांजलि श्री के साहित्य में निम्नलिखित विषय प्रमुख रूप से सामने आते हैं:

- स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मबोध
- पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति
- स्त्री की इच्छाएँ, यौनिकता और मनोवैज्ञानिक पहलू
- स्त्री का विद्रोह और समाज के साथ उसका संघर्ष
- सामाजिक वर्जनाएँ और स्त्री के लिए नए रास्तों की खोज

स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मबोध

स्त्री विमर्श के केंद्र में स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मबोध (Self-Realization) का प्रश्न प्रमुख रूप से उपस्थित होता है। साहित्य में इसे विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया गया है—कभी नारी के संघर्ष के रूप में, कभी उसकी मानसिक उथल-पुथल के रूप में, तो कभी समाज की बेड़ियों को तोड़कर अपनी पहचान स्थापित करने की प्रक्रिया के रूप में।

गीतांजलि श्री का साहित्य इस विमर्श को एक नया आयाम देता है। उनकी रचनाएँ यह दिखाती हैं कि स्त्री की स्वतंत्रता केवल सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें मानसिक, भावनात्मक और यौनिक स्वतंत्रता भी शामिल है।

१. स्वतंत्रता का द्वंद्वः परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष

भारतीय समाज में स्त्रियों की स्वतंत्रता का प्रश्न हमेशा से विवादित रहा है। पारंपरिक मान्यताओं में स्त्री को त्याग, सहनशीलता और परिवार के लिए समर्पण का प्रतीक माना जाता रहा है, जबकि आधुनिक विचारधारा स्त्री को एक स्वतंत्र, आत्मनिर्भर और अपने निर्णय स्वयं लेने वाली इकाई के रूप में देखती है।

गीतांजलि श्री का उपन्यास *'रेत समाधि'* इस द्वंद्व को बहुत गहराई से दर्शाता है। इस उपन्यास की वृद्ध नायिका, जो लंबे समय तक समाज और परिवार की परंपराओं में बंधी रही, अंततः अपनी स्वतंत्रता की खोज में निकलती है। यह यात्रा केवल भौतिक नहीं, बल्कि मानसिक और आत्मबोध की भी है।

"क्या स्वतंत्रता केवल युवाओं का अधिकार है? क्या वृद्धा के भीतर भी इच्छाएँ नहीं होतीं?"

(*रेत समाधि*, गीतांजलि श्री)

यह प्रश्न पितृसत्तात्मक व्यवस्था को सीधी चुनौती देता है और यह दिखाता है कि स्वतंत्रता और आत्मबोध किसी आयु-सीमा में बंधे हुए नहीं होते।

२. आत्मबोध की प्रक्रिया: स्त्री का स्वयं को पहचानना

स्त्री विमर्श में आत्मबोध का महत्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि पारंपरिक समाज ने स्त्री की पहचान को सदैव उसकी भूमिकाओं—माँ, पत्नी, बेटी, बहू आदि—तक सीमित किया है। गीतांजलि श्री का साहित्य इस सीमित पहचान को चुनौती देता है और स्त्री को एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में देखने की दृष्टि प्रदान करता है।

उनकी कहानियाँ यह दिखाती हैं कि आत्मबोध की प्रक्रिया कई स्तरों पर होती है:

- **शारीरिक स्तर पर:** जब स्त्री अपने शरीर और इच्छाओं को स्वीकार करती है।
- **भावनात्मक स्तर पर:** जब वह अपने अंदर के द्वंद्वों और भावनाओं को समझती है।
- **सामाजिक स्तर पर:** जब वह समाज द्वारा थोपे गए नियमों को चुनौती देती है।

उदाहरण के लिए, *रेत समाधि* में नायिका का पाकिस्तान की यात्रा पर जाना केवल भौगोलिक यात्रा नहीं है, बल्कि उसके भीतर के परिवर्तन और आत्मबोध की यात्रा भी है। वह पहली बार अपनी इच्छाओं को खुलकर स्वीकार करती है, जो उसके संपूर्ण जीवन में दबा दी गई थीं।

३. पितृसत्तात्मक समाज में स्वतंत्रता का संघर्ष

स्त्री की स्वतंत्रता को लेकर सबसे बड़ी बाधा पितृसत्तात्मक समाज ही है, जो उसे सदैव नियंत्रण में रखना चाहता है। गीतांजलि श्री के साहित्य में यह संघर्ष स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

उनकी कृतियों में स्त्रियाँ अपने लिए नए रास्ते तलाशती हैं, लेकिन समाज की बेड़ियाँ उन्हें बार-बार पीछे खींचने की कोशिश करती हैं। फिर भी, वे हार नहीं मानतीं और अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ती हैं।

"स्त्री को स्वतंत्रता चाहिए, लेकिन यह स्वतंत्रता क्या है? किससे स्वतंत्रता? और क्या इसका कोई अंत है?" (*रेत समाधि*, गीतांजलि श्री)

यह सवाल पूरे स्त्री विमर्श का सार है। स्वतंत्रता केवल एक सामाजिक अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है, जिसे हर स्त्री को अपने जीवन में स्वयं परिभाषित करना होता है।

४. स्वतंत्रता और आत्मबोध का परस्पर संबंध

स्त्री की स्वतंत्रता और आत्मबोध एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। जब तक कोई स्त्री स्वयं को नहीं पहचानती, तब तक वह पूरी तरह स्वतंत्र नहीं हो सकती। इसी तरह, स्वतंत्रता पाने के लिए उसे अपने भीतर की आवाज़ को सुनना होगा और अपने आत्मबोध की प्रक्रिया से गुजरना होगा।

गीतांजलि श्री का साहित्य यह दिखाता है कि यह प्रक्रिया आसान नहीं होती। स्त्रियों को समाज, परिवार, परंपराओं और अपनी ही मानसिक बाधाओं से लड़ना पड़ता है। लेकिन जब वे इस यात्रा को तय करती हैं तो वे एक नए अस्तित्व को प्राप्त करती हैं—एक ऐसा अस्तित्व जो उनके अपने होने की पुष्टि करता है।

५. स्त्री की स्वतंत्रता और समाज की स्वीकृति

स्त्री जब अपने अस्तित्व को पहचान लेती है और स्वतंत्र होने का निर्णय लेती है, तो समाज उसके इस बदलाव को सहज रूप से स्वीकार नहीं करता। गीतांजलि श्री के साहित्य में यह संघर्ष बार-बार सामने आता है। उनके पात्र न केवल व्यक्तिगत स्तर पर परिवर्तन से गुजरते हैं, बल्कि वे सामाजिक ढांचे से भी टकराते हैं।

रेत समाधि की वृद्ध माँ का उदाहरण लें—वह जब अपनी इच्छाओं को पहचानती है और स्वयं के लिए निर्णय लेने लगती है, तो समाज और परिवार उसकी इस स्वतंत्रता को सहजता से नहीं स्वीकारते। उम्रदराज़ होने के बावजूद, जब वह सीमा पार करने का निर्णय लेती है, तो यह केवल भौगोलिक सीमा को लांघना नहीं है, बल्कि एक मानसिक और सांस्कृतिक बाधा को भी तोड़ना है।

यह स्थिति अन्य स्त्री पात्रों पर भी लागू होती है। गीतांजलि श्री के लेखन में स्त्रियों का स्वतंत्रता की ओर बढ़ना एक साहसिक कदम होता है, लेकिन यह प्रक्रिया बाधाओं से भरी होती है।

६. आत्मबोध और सामाजिक मूल्यों की पुनर्परिभाषा

जब कोई स्त्री अपने आत्मबोध की ओर बढ़ती है, तो वह केवल अपने जीवन को नहीं, बल्कि अपने आसपास के समाज को भी प्रभावित करती है। गीतांजलि श्री के उपन्यासों में स्त्री केवल अपने भीतर परिवर्तन नहीं लाती, बल्कि सामाजिक मूल्यों को पुनर्परिभाषित करने की ओर भी अग्रसर होती है।

उदाहरण के लिए, *हमारा शहर उस बरस* में स्त्री के आत्मबोध की यात्रा केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह समाज के व्यापक ढांचे में बदलाव की बात भी करती है। यह दर्शाता है कि स्त्रियों की पहचान और उनकी स्वतंत्रता केवल उनका व्यक्तिगत मुद्दा नहीं है, बल्कि यह पूरे समाज को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया है।

गीतांजलि श्री के साहित्य में स्त्री विमर्श केवल एक नारीवादी दृष्टिकोण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज के भीतर मौजूद उन जड़ों को भी देखता है, जो स्त्री की स्वतंत्रता को बाधित करती हैं। उनके पात्र जब अपने आत्मबोध और स्वतंत्रता की राह चुनते हैं, तो वे सामाजिक मूल्यों की एक नई परिभाषा गढ़ने का काम भी करते हैं।

७. पितृसत्ता और स्त्री की भूमिका का पुनरावलोकन

गीतांजलि श्री के साहित्य में पितृसत्ता का प्रभाव एक प्रमुख मुद्दा है। पितृसत्तात्मक समाज स्त्री की पहचान और स्वतंत्रता को नियंत्रित करता है। परंपरागत रूप से स्त्री को घरेलू जिम्मेदारियों और सामाजिक मर्यादाओं में बाँधकर उसकी

आकांक्षाओं और इच्छाओं को दबा दिया जाता है। लेकिन गीतांजलि श्री की रचनाएँ इन सीमाओं को चुनौती देती हैं और स्त्री के भूमिका का पुनरावलोकन करती हैं।

उदाहरण के लिए, *रेत समाधि* की वृद्ध माँ, जो पारंपरिक रूप से एक सहनशील और समर्पित स्त्री के रूप में जीवन बिताती रही, अंततः अपने जीवन की बागडोर स्वयं संभालने का निर्णय लेती है। उसकी यात्रा इस बात का प्रतीक है कि स्त्रियाँ किसी भी उम्र में अपने अस्तित्व को पुनर्परिभाषित कर सकती हैं। यह उपन्यास यह भी दिखाता है कि किस प्रकार पितृसत्ता के बंधन केवल युवा स्त्रियों तक सीमित नहीं होते, बल्कि वृद्धावस्था में भी वे महिलाओं को जकड़े रहते हैं।

इसके अलावा, *हमारा शहर उस बरस* में पितृसत्ता का प्रभाव केवल स्त्रियों तक ही सीमित नहीं रहता, बल्कि पुरुष भी इसके बोझ तले दबे दिखाई देते हैं। पुरुषों से भी समाज द्वारा एक विशेष तरह की शक्ति और नियंत्रण की अपेक्षा की जाती है, जिससे वे संवेदनशीलता और करुणा से वंचित हो जाते हैं। यह पितृसत्ता के व्यापक प्रभाव को दर्शाता है, जिससे केवल स्त्रियाँ ही नहीं, बल्कि समाज का हर वर्ग प्रभावित होता है।

गीतांजलि श्री की रचनाएँ इस धारणा को खारिज करती हैं कि स्त्री केवल एक अधीनस्थ भूमिका निभाने के लिए बनी है। उनके साहित्य में स्त्रियाँ अपनी पारंपरिक भूमिकाओं को तोड़ती हैं और नए प्रतिमानों का निर्माण करती हैं। वे केवल पुरुषों के अधीनस्थ नहीं रहतीं, बल्कि अपने निर्णय स्वयं लेने की दिशा में आगे बढ़ती हैं।

८. स्त्री के निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक स्वीकृति

स्त्री जब अपने लिए निर्णय लेना चाहती है, तो उसे सामाजिक विरोध और मानसिक द्वंद्व का सामना करना पड़ता है। गीतांजलि श्री के साहित्य में यह पहलू विशेष रूप से उभरकर आता है। उनके कई पात्र यह महसूस करते हैं कि समाज केवल उन स्त्रियों को स्वीकार करता है, जो पारंपरिक नियमों का पालन करती हैं।

रेत समाधि में वृद्ध माँ जब अपना निर्णय स्वयं लेने की कोशिश करती है, तो उसका परिवार ही उसे रोकने की कोशिश करता है। यहाँ तक कि उसकी बेटी, जो स्वयं एक स्वतंत्र स्त्री है, भी माँ के इस निर्णय से असहज महसूस करती है। यह दर्शाता है कि केवल पुरुष ही नहीं, बल्कि स्त्रियाँ भी पितृसत्ता के प्रभाव में रहती हैं और अनजाने में अन्य स्त्रियों की स्वतंत्रता को सीमित करने का काम करती हैं।

इसी तरह, *हमारा शहर उस बरस* में भी स्त्री पात्रों के निर्णय लेने की प्रक्रिया को दिखाया गया है। सामाजिक अशांति और सांप्रदायिक दंगों के बीच, स्त्रियाँ न केवल अपने व्यक्तिगत जीवन के फैसले लेती हैं, बल्कि सामाजिक परिस्थितियों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह सिद्ध करता है कि स्त्री के निर्णय केवल व्यक्तिगत नहीं होते, बल्कि समाज के लिए भी बदलाव का माध्यम बन सकते हैं।

गीतांजलि श्री का साहित्य स्त्रियों के निर्णय लेने की क्षमता को केवल उनके अधिकार तक सीमित नहीं रखता, बल्कि यह भी दिखाता है कि एक बार जब स्त्री अपने निर्णय स्वयं लेना शुरू कर देती है, तो समाज उसे किस दृष्टि से देखता है और उसे क्या-क्या विरोध सहन करना पड़ता है। लेकिन अंततः यह संघर्ष उसकी असली पहचान को स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाता है।

९. स्त्री की यौनिकता और इच्छाओं का चित्रण

गीतांजलि श्री के साहित्य में स्त्री की यौनिकता और उसकी इच्छाओं को विशेष स्थान दिया गया है। पारंपरिक भारतीय समाज में स्त्री की यौनिकता को या तो दबा दिया जाता है या फिर केवल पुरुष की इच्छाओं के संदर्भ में देखा जाता है।लेकिन गीतांजलि श्री इस दृष्टिकोण को तोड़ते हुए स्त्री की यौनिकता को उसके स्वयं के अस्तित्व का एक महत्वपूर्ण हिस्सा मानती हैं। उनके उपन्यासों और कहानियों में स्त्री अपनी इच्छाओं को पहचानती है, उन पर बात करती है, और उन्हें जीने की कोशिश करती है।

रेत समाधि में स्त्री की यौनिकता

इस उपन्यास में वृद्ध माँ की यात्रा केवल भौगोलिक ही नहीं, बल्कि आंतरिक भी है। वह जीवनभर एक आदर्श पत्नी और माँ की भूमिका में बंधी रही, लेकिन उसके भीतर दबे हुए सपने, इच्छाएँ और भावनाएँ कहीं न कहीं जीवित रहीं। पाकिस्तान यात्रा के दौरान उसका सामना ऐसे अनुभवों से होता है, जो उसकी यौनिकता को पुनः जागृत करते हैं। यह दिखाता है कि यौन इच्छाएँ केवल युवावस्था तक सीमित नहीं होतीं, बल्कि किसी भी उम्र में एक व्यक्ति इन्हें महसूस कर सकता है।

यहाँ गीतांजलि श्री यह भी बताती हैं कि समाज वृद्ध स्त्रियों की यौनिकता को पूरी तरह से नकार देता है। यदि कोई वृद्ध स्त्री अपनी इच्छाओं को अभिव्यक्त करे, तो उसे अस्वाभाविक माना जाता है। लेकिन *रेत समाधि* में माँ का यह अनुभव समाज की इसी सोच को चुनौती देता है।

हमारा शहर उस बरस में प्रेम और वर्जनाएँ

हमारा शहर उस बरस उपन्यास में सांप्रदायिक दंगों की पृष्ठभूमि में एक प्रेम कहानी भी चलती है। यहाँ स्त्री के लिए प्रेम और यौनिकता केवल भावनात्मक पहलू नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक और राजनीतिक बाधाओं से भी घिरी होती हैं। जब एक स्त्री किसी "अनुचित" प्रेम में पड़ती है—जो जाति, धर्म या पारिवारिक अपेक्षाओं के खिलाफ हो—तो समाज उसे कठोर दंड देता है।

यह उपन्यास यह भी दिखाता है कि स्त्री की यौनिकता केवल शारीरिक संबंधों तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह उसकी संपूर्ण आत्मा और अस्तित्व का हिस्सा होती है। प्रेम और यौनिकता का दमन केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं होता, बल्कि समाज इसे एक सामूहिक अनुशासन के रूप में इस्तेमाल करता है।

स्त्री की इच्छाओं को दबाने का सामाजिक तंत्र

गीतांजलि श्री के साहित्य में बार-बार यह दर्शाया गया है कि किस तरह पितृसत्तात्मक समाज स्त्री की इच्छाओं को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग करता है—संस्कार, धर्म, परिवार, और यहाँ तक कि स्त्रियों के बीच ही एक-दूसरे को नियंत्रित करने की व्यवस्था।

- स्त्री के लिए विवाह को अनिवार्य बना दिया जाता है ताकि उसकी यौनिकता को "नियंत्रित" किया जा सके।
- विधवा स्त्रियों के लिए समाज का दृष्टिकोण और कठोर हो जाता है, जिससे उनकी इच्छाओं को पूरी तरह से नकार दिया जाता है।
- अगर कोई स्त्री अपनी इच्छाओं को खुलकर स्वीकार कर ले, तो उसे 'चरित्रहीन' या 'अनैतिक' घोषित कर दिया जाता है।

स्त्री की यौनिकता का पुनरुत्थान

गीतांजलि श्री का साहित्य इस परंपरागत सोच के खिलाफ खड़ा होता है और यह दिखाता है कि स्त्री की यौनिकता उसका व्यक्तिगत अधिकार है। यह केवल जैविक जरूरत नहीं, बल्कि आत्मसम्मान और स्वतंत्रता का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

उनकी कहानियों में स्त्री अपने शरीर और इच्छाओं को नए सिरे से पहचानती है, उन्हें अपनाती है और समाज के नियमों को चुनौती देने की हिम्मत रखती है। यह संदेश भारतीय साहित्य में स्त्री-विमर्श की दिशा को और अधिक स्वतंत्र और मुखर बनाता है।

निष्कर्ष

गीतांजलि श्री का साहित्य स्त्री-विमर्श के महत्वपूर्ण आयामों को उजागर करता है। उनके उपन्यासों और कहानियों में नारी-संघर्ष, सामाजिक बेड़ियों से मुक्ति की आकांक्षा, पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के द्वंद्व, मातृत्व एवं यौनिकता के नए आयाम, तथा स्त्री की आत्म-परिभाषा को अत्यंत संवेदनशीलता और गहराई से प्रस्तुत किया गया है।

"रेत समाधि" जैसे उपन्यास यह दर्शाते हैं कि स्त्री की पहचान केवल समाज की बनाई परिभाषाओं तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें स्त्री स्वयं को खोजती है, अपनी स्वतंत्रता को परिभाषित करती है, और अपने अस्तित्व की पुष्टि करती है। उनकी लेखनी स्त्री को एक निष्क्रिय पात्र नहीं बल्कि एक सक्रिय, संघर्षशील और विचारशील इकाई के रूप में प्रस्तुत करती है, जो अपने अधिकारों और स्वाभाविक स्वतंत्रता के लिए लड़ती है।

गीतांजलि श्री का साहित्य केवल स्त्री की व्यक्तिगत मुक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यापक सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान देता है। उनकी रचनाएँ न केवल पाठकों को सोचने पर मजबूर करती हैं, बल्कि समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक संरचनाओं को भी चुनौती देती हैं।

अतः, गीतांजलि श्री का लेखन नारीवादी चेतना को सशक्त करने का कार्य करता है और साहित्य में स्त्री-अस्मिता, अधिकार एवं स्वतंत्रता के विमर्श को नए आयाम प्रदान करता है। उनका साहित्य केवल एक कथा नहीं, बल्कि स्त्री की पहचान, संघर्ष और पुनरुत्थान की एक गूंज है, जो समाज में एक नया बदलाव लाने की क्षमता रखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. गीतांजलि श्री, *माई*, राजकमल प्रकाशन, १९९३।
२. गीतांजलि श्री, *रेत समाधि*, राजकमल प्रकाशन, २०१८।
३. गीतांजलि श्री, *हमारा शहर उस बरस*, राजकमल प्रकाशन, १९९८।
४. निर्मला जैन, *हिंदी उपन्यास का इतिहास*, साहित्य अकादमी।
५. प्रभा खेतान, *स्त्री उपन्यासों में नारी विमर्श*, वाणी प्रकाशन।
६. मैत्रेयी पुष्पा, *वर्तमान हिंदी साहित्य और नारीवाद*, साहित्य अकादमी।